97501 - वे लोग कम्युनिस्ट शासन के अधीन थे और उन्हें नमाज़ और रोज़े का कुछ भी ज्ञान नहीं था तो क्या उन पर क़ज़ा अनिवार्य है ?

प्रश्न

मैं बुल्गारिया की रहने वाली एक मुसलमान हूँ। हम लोग कम्युनिस्ट शासन के अधीन थे और हमें इस्लाम के बारे में कुछ भी जानकारी नहीं थी, बल्कि बहुत सी इबादतें निषिद्ध और वर्जित थीं। मुझे इस्लाम के बारे में कुछ भी पता नहीं था यहाँ तक कि मैं बीस वर्ष की हो गई, इसके बाद मैं अल्लाह की शरीअत (धर्म शास्त्र) की प्रतिबद्ध हो गई। मेरा आप से प्रश्न यह है कि : मुझ से जो नमाज़ और रोज़ा छूट गया है क्या मेरे ऊपर उनकी क़ज़ा (आपूर्ति) अनिवार्य है ?

विस्तृत उत्तर

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह तआला के लिए योग्य है।.

सबसे पहले :

हम अल्लाह सर्वशक्तिमान की प्रशंसा करते हैं कि उसने आप को अत्याचारी और अन्यायी कम्युनिस्ट शासन से छुटकारा दिलाया जो कि निरंतर चालीस से अधिक वर्षों तक मुसलमानों का दमन करता रहा, जिसके दौरान उसने मस्जिदों को विध्वंस कर दिया और उनमें से कुछ को संग्रहालयों में बदल दिया, इस्लामी स्कूलों पर क़ब्ज़ा कर लिया, और मुसलमानों के नामों को बदलने और इस्लामी पहचान को मिटाने पर कार्य किया।

किंतु . . अल्लाह अपने प्रकाश को पूरा करके ही रहता है भले ही नास्तिकों (अविश्वासियों) को बुरा लगे।

चुनाँचे कम्युनिस्ट शासन अपनी शक्तिशालिता और अत्याचार के साथ 1989 ई. में नष्ट हो गया, और इस से मुसलमानों को बड़ी खुशी हुई, और वे अपनी प्राचीन मस्जिदों की तरफ लौट आये और उसकी मरम्मत और उसकी स्थिति का सुधार करने लगे, और अपने बच्चों को क़ुर्आन की शिक्षा देने लगे, तथा मुसलमान महिलाओं का पर्दा (हिजाब) गलियों और सड़कों पर दिखाई देने लगा।

हम अल्लाह तआला से प्रार्थना करते हैं कि वह मुसलमानों को उनके धर्म की ओर अच्छी तरह पलटा दे, उनकी मदद करे, उन्हें सम्मान प्रदान करे और उनके दुश्मनों को परास्त कर दे।

दूसरा :

बुल्गारिया में मुसलमानों की एक पीढ़ी कम्युनिस्ट शासन के अधीन पली बढ़ी है जिन्हें इस्लाम के बारे में कुछ भी पता नहीं है परंतु वे मुसलमान हैं, क्योंकि कम्युनिस्ट उनके और उनके इस्लाम की शिक्षा प्राप्त करने के बीच रूकावट बन गया था, बल्कि वह बुल्गारिया में क़ुर्आन करीम और इस्लामी पुस्तकों का प्रवेश भी वर्जित कर रखा था।

ये लोग जिन्हें इस्लाम के अहकाम, उसकी इबादत और कर्तव्यों के बारे में कुछ भी पता नहीं है उनके ऊपर इन इबादतों में से किसी भी चीज़ की क़ज़ा अनिवार्य नहीं है। क्योंकि अगर मुसलमान शरीअत का ज्ञान प्राप्त करने में असमर्थ हो, और उसके पास शरीअत के अहकाम (प्रावधानों और नियमों) का ज्ञान न पहुँचे तो उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं है, क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है :

[لا يُكَلِّفُ اللَّهُ نَفْساً إِلَّا وُسْعَهَا] البقرة : 286

"अल्लाह तआला किसी प्राणी पर उसकी शक्ति से अधिक भार नहीं डालता है।" (सूरतुल बक़रा : 286)

शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमिय्या रहिमहुल्लाह - अल्लाह उन पर दया करे - ने फरमाया :

" मुसलमानों के बीच इस बारे में कोई मतभेद नहीं है कि जो व्यक्ति दारूल कुफ्र में है और वह ईमान ले आया और हिजरत करने पर सक्षम नहीं है तो उसके ऊपर शरीअत के वे अहकाम अनिवार्य नहीं हैं जिनको करने में वह असमर्थ है, बल्कि अनिवार्यता उसी मात्रा में है जितना संभव हो। इसी तरह वह चीज़ भी है जिसके हुक्म का उसे ज्ञान नहीं है, यदि उसे इस बात की जानकारी नहीं है कि नमाज़ उसके ऊपर अनिवार्य है और उसने एक अवधि तक नमाज़ नहीं पढ़ी तो विद्वानों के दो कथनों में से सबसे स्पष्ट कथन के अनुसार उस पर क़ज़ा अनिवार्य नहीं है, और यह अबू हनीफा और अहलुज़-ज़ाहिर का मत है और यही इमाम अहमद के मत में दो रूपों में से एक है।

इसी तरह अन्य वाजिबात जैसे रमज़ान के महीने का रोज़ा रखना और ज़कात इत्यादि का भुगतान करना है।

और यदि उसे शराब के हराम होने का पता न चला और उसने शराब पी लिया तो मुसलमानों की सर्व सहमति के साथ उसे दंडित नहीं किया जायेगा। उन्हों ने मात्र नमाज़ की क़ज़ा करने के बारे में मतभेद किया है . . .

इन सभी बातों का आधार यह है कि : क्या शरीअतें उस व्यक्ति के लिए अनिवार्य हो जाती हैं जिसे उनका ज्ञान न हो अथवा वे जानकारी के बाद ही किसी पर अनिवार्य होती हैं ?

इस बारे में शुद्ध (सही) बात यह है कि : जानकारी पर सक्षम होने के साथ ही हुक्म साबित होता है, और जब तक उसके अनिवार्य होने का पता न हो उसकी क़ज़ा नहीं करना है, सहीह हदीस में प्रमाणित है कि सहाबा में से कुछ रमज़ान के महीने

में फज्र के उदय होने (भोर होने) के बाद खाते रहे यहाँ तक कि उनके लिए काले धागे से सफेद धागा स्पष्ट हो गाया, और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन्हें क़ज़ा करने का आदेश नहीं दिया। उन्हीं में से कुछ एक अवधि तक जनाबत (अपवित्रता) की अवस्था में ठहरे रहे, नमाज़ नहीं पढ़ी, और उन्हें तयम्मुम के द्वारा नमाज़ पढ़ने के जाइज़ होने का ज्ञान नहीं था जैसे- अबू ज़र्र, उमर बिन खत्ताब और अम्मार रज़ियल्लाहु अन्हुम जब वह जुनबी हो गए, और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनमें से किसी को भी क़ज़ा का हुक्म नहीं दिया।

इसमें कोई शक नहीं कि मक्का और ग्रामीण इलाक़ों में मुसलमानों की एक संख्या बैतुल मक़दिस (यरूशलेम) की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ती रही यहाँ तक कि उन्हें क़िब्ला के निरस्त होने की सूचना पहुँची और उन्हें नमाज़ों के दोहराने का आदेश नहीं दिया गया। इस तरह के बहुत से उदाहरण हैं। और यह उस मूल आधार के अनुसार है जिस पर सलफ (पूर्वज) और जमहूर उलमा क़ायम हैं कि : अल्लाह तआला किसी प्राणी पर उसकी शक्ति से बढ़कर भार नहीं डालता है। अतः अनिवार्यता शक्ति और सक्षमता के साथ जुड़ी हुई है, और सज़ा किसी आदेश किए गये काम के छोड़ने या किसी निषेध के करने पर हुज्जत क़ायम (तर्क स्थापित) करने के बाद ही होती है।" संक्षेप के साथ संपन्न हुआ।

"मजमूउल फतावा" (19/225).

इस आधार पर, आप लोगों पर उन इबादतों में से किसी भी चीज़ की क़ज़ा अनिवार्य नहीं है जिनके अनिवार्य होने का आप लोगों को ज्ञान नहीं था।

आप लोगों के लिए सलाह है कि शरीअत के अहकाम (प्रावधानों) को सीखने और धर्म की समझ हासिल करने पर ध्यान दें, तथा इस्लाम के सीखने और उस पर अमल करने और मुस्लिम पीढ़ी का प्रशिक्षण करने के भरपूर लालायित बनें, ताकि आप उन चुनौतियों का मुक़ाबला कर सकें जिनसे मुसलमानों को सामान्य रूप से और विशेष रूप से आपके देश में सामना करना पड़ता है।

हम अल्लाह सर्वशक्तिमान से प्रश्न करते हैं कि वह इस्लाम और मुसलमानों को सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान करे।